आरक्षण पर फिर हमला

आरएसएस ने मंडल आयोग की सिफारिशों का भी विरोध किया। आरएसएस के 26 अगस्त, 1990 के अंक में, पत्रिका की पत्रिका 'ऑर्गेनाइजर' लिखता है कि यह कल्पना करना कठिन है कि आरक्षण नीति सामाजिक ताने-बाने को किस कदर तोड़ रही है। यह मेरिट विहीन लोगों को बढ़ावा देता है, 'ब्रेन ड्रेन' के लिए जिम्मेदार है और जाति-आधारित झगडे को बढ़ाता है।

‖अभय कुमार

दिल्ली चुनाव के शोर में, सर्वोच्च न्यायालय ने आरक्षण के संबंध में एक विवादित फैसला सुनाया है, जिससे हाशिये पर रहने वाले लोगों में शासक वर्ग के प्रति भारी नाराजगी पाई जा रही है। अपने 7 फरवरी के फैसले में, सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि राज्य नौकरियों या प्रमोशन में आरक्षण देने के लिए बाध्य नहीं है, क्योंकि आरक्षण देना उसकी इच्छा पर निर्भर करता है। दूसरे शब्दों में, राज्य अपने विवेक का उपयोग कर आरक्षण दे भी सकता है और इस से इंकार भी कर सकता है।

जस्टिस एल नागेश्वर राव और हेमंत गुप्ता की की दो सदस्यीय बेंच ने कहा है कि आरक्षण भारत भारतीय सविंधान के बुनयादी अधिकारों का हिस्सा नहीं है। इसलिए इसे लागू करना या नहीं करना राज्य के निर्णय पर निर्भर करता है।

इस फैसले के बाद दलितों, आदिवासी और पिछड़ी जातियों में काफी आक्रोश देखने को मिल रहा है। इस फैसले के खिलाफ जगह जगह प्रदर्शन भी किया जा रहा है। "आरक्षण के खिलाफ हमला कोई नई बात नहीं है। यह हमला तब तक जारी रहेगा जब तक समाज में जाति व्यवस्था है. यह बात जेएनयू से पढ़े और जाने माने स्कॉलर उमाकांत ने कही। उमा कांत ने बिहार के दलितों के मसले पर पीएचडी पूरी की और सामाजिक न्याय के मुद्दों पर उनकी गहरी नजर है।

इस फैसले के बाद विपक्षी दलों ने सरकार को घेरना शुरू कर दिया है। कांग्रेस ने कहा है कि वह सुप्रीम कोर्ट के फैसले से वह असहमत है। यह भी आरोप लगाया कि भाजपा सरकार में एससी और एसटी के अधिकार दांव पर हैं। कांग्रेस महासचिव मुकुल वासनिक ने कहा, 'कांग्रेस पार्टी का मानना है कि एससी और एसटी की नियुक्ति सरकार के विवेक पर नहीं छोड़ी जानी चाहिए। यह एक संवैधानिक

अधिकार है।' भाजपा छोड़कर हाल के दिनों में कांग्रेस में शामिल होने वाले दलित नेता आदित्य राज ने इसी प्रेस कॉन्फ्रेंस से कहा कि 'भाजपा मूल रूप से दलित और आरक्षण के खिलाफ है।'

कांग्रेस के पूर्व अध्यक्ष राहुल गांधी भी इस मसले पर भाजपा सरकार पर हमले पर बोलते हुए कि भाजपा और आरएसएस कभी नहीं चाहते थे कि दलित आगे बढ़ें। पत्रकारों से बात करते हुए, गांधी ने कहा, 'मैं एससी, एसटी और ओबीसी को बताना चाहता हूं कि मोदी और भागवत चाहे कितने भी सपने देखें, हम आरक्षण को खत्म नहीं होने देंगे।'

विपक्षी दलों ने भी इस फैसले पर निराशा व्यक्त की है। राजद के प्रवक्ता मनोज झा ने केंद्र सरकार से 'समीक्षा याचिका' दायर करने की अपील की है। उन्होंने कहा कि अगर ऐसा नहीं किया गया तो सामाजिक न्याय की विचारधारा को धक्का लगेगा। सीपीआई और डीएमके ने सुप्रीम कोर्ट के फैसले को गलत करार दिया है।

सत्तारूढ़ एनडीए के सहयोगी दलों ने भी इस मुद्दे पर बोलना शुरू कर दिया है। वह यह बखूबी जानते हैं कि अगर वे आरक्षण पर चुप रहते हैं तो उनकी सामाजिक जमीन उनसे खिसक जाएगी। लोक जनशक्ति पार्टी और जनता दल यू ने अदालत के फैसले के खिलाफ अपने विचार व्यक्त किए हैं। अदालत के फैसले के बाद, केंद्रीय मंत्री रामविलास पासवान ने अपने निवास पर दलित सांसदों की बैठक बुलाई। जनता दल के राष्ट्रीय महासचिव और पार्टी प्रवक्ता के सी त्यागी ने केंद्र सरकार से मौजूदा संसद सत्र में 'अध्यादेश' बनाने का आह्वान किया है ताकि प्रमोशन में एससी, एसटी आरक्षण को जारी रखा जा सके। इसके अलावा, उन्होंने केंद्र सरकार से वर्तमान बजट सत्र में एक प्रस्ताव पारित करने के लिए भी कहा।

दिलचस्प बात यह है कि लगभग सभी राजनीतिक दल चाहे वे विपक्ष की हों या सत्ता पक्ष की, सभी अदालत के फैसले के खिलाफ खड़े नजर आ रहे हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि आरक्षण पर हमले रकने का नाम भी नहीं ले रहे हैं। न्यायपालिका जहाँ आरक्षण की भावना को समझने में असमर्थ रही है, वहीं मीडिया और सिविल सोसाइटी आरक्षण के समर्थन में बोलने से कतराता रहा है। इसका एक बड़ा कारण यह है कि इन संस्थानों में वंचित समाज के लोगों का प्रतिनिधित्व बहुत कम है या बिल्कुल नहीं है। इन संस्थानों में उच्च जातियों का वर्चस्व काफी हद तक आज भी स्थापित है।

यही जातिवादी मानसिकता है जिस की वजह से मीडिया का एक बड़ा हिस्सा सुप्रीम कोर्ट के आरक्षण विरोधी फैसले का स्वागत करने के लिए आगे आया। मंडल आन्दोलन के दौरान भी इनकी भूमिका वंचित समुदाय के विरोध में ही रही थी। कोई इस निर्णय का जश्न मना रहा है, तो कोई बहुत चतुराई से कोर्ट के आदेश पर उठाए गए सवालों को खारिज करके अपनी आरक्षण पर छूट कर रहा है।

उदाहरण के लिए, अपूर्वा मंधानी ने 'प्रिंट' वेब पोर्टल के लिए 12 फरवरी को एक लेख लिखा था, जिसका शीर्षक था 'सुप्रीम कोर्ट का फैसला कुछ भी नया नहीं है' और तर्क दिया कि आरक्षण मौलिक अधिकारों का हिस्सा नहीं है। अपने तर्क में, उन्होंने अदालत के पिछले फैसलों का उल्लेख किया और कहा कि पूर्व में इस तरह के फैसले अदालत द्वारा जारी किए गए हैं।

इस निर्णय के बाद, "टाइम्स ऑफ इंडिया" ने अपने संपादकीय (10 फरवरी) में आरक्षण नीति पर निशाना साधा। सम्पादकीय ने कहा कि आरक्षण नीति अवसर की समानता के विचार को समाप्त करती है। भारतीय मीडिया, जो सवर्णों और पूंजीपतियों के हाथ की कठपुतली है, वही लिखता और बोलता है, जो

उनके आका के स्वार्थ साधते हैं।

जहाँ तक राजनीतिक दलों का सवाल हैं वह भी आरक्षण के साथ मजबूती से नहीं खड़े रहें हैं। मिसाल के तौर पर, कांग्रेस ने आरक्षण लागू करने में उतनी ईमानदारी नहीं दिखाई जितनी उम्मीद वंचित वर्गों को थी। लेकिन जहां तक हिंदू सांप्रदायिक भाजपा और आरएसएस का सवाल है, वह शुरू से ही रिजर्वेशन के सख्त विरोधी रहे हैं। उनके समर्थकों का एक बड़ा हिस्सा आरक्षण का प्रबल विरोधी हैं। मोदी के मतदाताओं का एक बड़ा वर्ग, जो उच्च जाति से आता है, चाहता है कि सरकार जल्द से जल्द आरक्षण को समाप्त कर दे।

लेकिन बीजेपी आरक्षण के सामने से खत्म नहीं करना चाहती। यह उसकी मजबूरी है। उसे बखूबी मालूम है कि सवर्ण वोटों (10 से 15 फीसदी) से वह कभी सरकार नहीं बना पायेगी। इसलिए, भाजपा आरक्षण के खिलाफ पब्लिक में नहीं बोल सकती क्योंकि उसे यह दिखाना है कि वह पिछड़े वर्गों की "सबसे बड़ा हितैषी" है।

लेकिन यह भी एक तथ्य है कि उनका एजेंडा आरक्षण को कमजोर करना है। यही कारण है कि वह दिन–रात निजीकरण की पालिसी को बढ़ा रही है. सरकारी नौकरियां खत्म की जा रही है। पब्लिक सेक्टर को प्राइवेट हाथों में बेचा जा रहा है। न रहेगी पब्लिक सेक्टर और न मिलेगा वंचितों को आरक्षण! इसी रह पर स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालय को प्राइवेट किया जा रहा है।

सरकारी विभागों में समूह चार की नौकरियों, जिनमें दलित, आदिवासी और पिछड़े समुदाय शामिल रहे हैं, का निजीकरण पहले ही कर दिया गया है और उनकी लाखों नौकरियों को समाप्त कर दिया गया है। कहने का तात्पर्य यह है कि भाजपा आरक्षण के विरोध में बयान नहीं देगी, लेकिन उसकी नीति आरक्षण को पिछले दरवाजों से कमजोर करते रहना है।

जो काम भाजपा खुलकर नहीं कर सकता क्योंकि उसे चुनाव में वंचितों का वोट चाहिए, वह काम आरएसएस करता रहा है. आरक्षण के खिलाफ माहौल बनाने में आरएसस आगे आगे रहा है क्योंकि किसी के प्रति उसकी कोई जवाबदेह नहीं है। हमें आरएसएस प्रमुख मोहन भागवत के आरक्षण विरोधी बयानों को इस संदर्भ में देखना चाहिए।

आरएसएस ने मंडल आयोग की सिफारिशों का भी विरोध किया। आरएसएस के 26 अगस्त, 1990 के अंक में, पत्रिका की पत्रिका 'ऑर्गनाइजर' लिखता है कि यह कल्पना करना कठिन है कि आरक्षण नीति सामाजिक ताने–बाने को किस कदर तोड़ रही है। यह मेरिट विहीन लोगों को बढ़ावा देता है, 'ब्रेन ड्रेन' के लिए जिम्मेदार है और जाति–आधारित झगडे को बढ़ाता है।

मगर बाबा साहेब आंबेडकर के विचारों को पढ़ा जाये तो यह साफ जाहिर हो जायेगा की भाजपा, आरएसएस और ब्रह्मवादी सत्तावर्ग आरक्षण को न समझ पाया है और न ही इसे दिल से कबूल कर पाया है। मिसाल के तौर पर, अंबेडकर ने कहा है कि उच्च जाति के लोग संस्थायों पर कब्जा जमाये हुए हैं और वह अपने समुदाय के हितों का ध्यान सब से ऊपर रखते हैं। उन्हें दलितों के हितों की परवाह नहीं होती। यही कारण है कि योग्यता के नाम पर वंचित समाज के लोगों को नौकरी पाने और संसद और विधान सभा में जाने से रोका नहीं जा सकता है, क्योंकि यदि वे इन संस्थानों में नहीं हैं तो कौन उनके हितों का ध्यान रखेगा?

कितना दुखद है कि भाजपा और आरएसएस के लोग अंबेडकर का नाम जाप करने में आगे आगे रहते हैं, लेकिन जब हाशिए के लोगों के अधिकारों की रक्षा की बात आती है, तो यह उनके खिलाफ खड़े हो जाते हैं। यही कारण है कि कोर्ट के इस निर्णय से हाशिये के लोग बहुत नाराज हैं। उनकी नाराजगी सत्ताधारी दलों के लिए भारी पड़ सकती है। ▫▫

लेखक : जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में शोधार्थी हैं।
ईमेल : debatingissues@gmail.com

आगामी अंक

"हाशिये की आवाज़"

मई 2020
आजाद भारत के गुलाम मजदूर

जून 2020
झारखंड सरकार : एक अवलोकन

प्रकाशन हेतु अपने आलेख भेजें :
hka@isidelhi.org.in

आलेख

सावित्रीबाई फुले के सामाजिक उत्थान सम्बन्धी कार्य

हंसराज 'सुमन'

शिक्षा पर एक खास वर्ग का वर्चस्व था, जिसने समाज पर अपना एकाधिकार सदियों से जमाए बैठा था, उससे शिक्षा को मुक्त कर सभी के लिए शिक्षा के द्वार खोले। खासकर लड़कियों के लिए शिक्षा की नींव रखने वाली सावित्रीबाई फुले ही थीं। जिनका जन्म 3 जनवरी, 1831 को महाराष्ट्र के सतारा जिले (पूना) के नाय गाँव में हुआ था। इनके पिता का नाम खण्डोजी नेवसे और माता का नाम लक्ष्मीबाई था। मात्र 9 वर्ष की उम्र सन 1840 में इनका विवाह 12 वर्षीय जोतीराव फुले से हुआ।

सावित्रीबाई का विवाह जिस समय जोतीराव फुले से हुआ उस समय वह अशिक्षित थीं। शादी के पश्चात् ही जोतीराव फुले ने उन्हें अपने घर पर ही पढ़ना–लिखना सिखाया। सावित्रीबाई ने अपने ससुराल में जब शिक्षा अर्जित कर ली, उसके बाद उन्होंने खुद पिछड़े और दलित समाज की बालिकाओं को पढ़ाना प्रारम्भ किया। उस समय समाज में लड़कियों को पढ़ाया नहीं जाता था, उनकी दशा अत्यंत दयनीय थी और उन्हें पढ़ने–लिखने की अनुमति नहीं थी। इस परम्परा को तोड़ने में जोतीराव और सावित्रीबाई फुले ने सन् 1848 में लड़कियों के लिए एक विद्यालय की स्थापना की। लड़कियों के लिए खुलने वाला भारत में यह पहला विद्यालय माना जाता है।

उस समय बालिकाओं को पढ़ाना कोई आसान कार्य नहीं था। उन्हें लोगों के कड़े विरोध का सामना करना पड़ा था। उन्हें न केवल भद्दी गालियाँ दी जाती थीं बल्कि लोग उन पर मल–मूत्र, पत्थर तक फेंकते थे। जिस समय वह स्कूल जाती थीं अंधविश्वासी, धर्मभीरू, स्त्री शिक्षा के घोर विरोधी लोग सावित्रीबाई फुले पर कूड़ा करकट, कीचड़, गोबर के अलावा मानव मल भी फेंकते थे, ताकि वह बालिकाओं को पढ़ाना छोड़ दे। सावित्रीबाई के कपड़े गंदे हो जाते थे इसलिए वह अपने साथ एक अन्य साड़ी ले जाती थी, जिसे बाद में स्कूल में जाकर बदल लेती थी। इन सबके बावजूद उन्होंने कभी हार स्वीकार नहीं की, बल्कि स्त्री शिक्षा और समाजोत्थान का कार्य निरन्तर जारी रखा।

विधवा, पुनर्विवाह, रूढ़िवाद और धार्मिक अंधवृिवास के लिए संघर्ष

देश में एक तरफ देश की आजादी के लिए आंदोलन किए जा रहे थे, वहीं दूसरी तरफ सावित्रीबाई फुले ने उस दौर में स्त्री जागरण के लिए कार्य करना शुरू किया। उस समय धार्मिक अंधविश्वास,